Vol. 8, Issue: 1, January: 2020
(IJRSML) ISSN: 2321 - 2853

तुलसीदास समाजवाद के चितेरे

डॉ. धार्मिनीबहन के. जोशी

संत कवि तुलसीदास विश्व के सबसे बड़े सांस्कृतिक समन्वय के पुरोहित एवं समाजवादी रचनाकार के रूप में विख्यात है । अपने छः बड़े मिलाकर कुल १२ काव्य ग्रंथों में तुलसीदास ने अपनी समाजवादी भावना का प्रस्तुतिकरण किया है । रत्नावली के कटु वचन से तुलसीदास का लौकिक प्रेम अलौकिक प्रेम में बदल गया और पत्नी रत्नावली के कारण पूरे समाज को तुलसीदास के साहित्य का लाभ मिला । परिवर्तनशील समय के साथ-साथ साहित्य के अनेक क्षेत्र में भी परिवर्तन होता रहा है । परंतु मनुष्य की मानसिकता में बहुत ज्यादा परिवर्तन नहीं आया है । भारतीय दर्शन के क्षेत्र में अद्वेतवाद, शुद्धाद्वैतवाद, विशिष्टाद्वैतवाद, द्वैताद्वेतवाद आदि, साहित्य के क्षेत्र में रसवाद ध्वनिवाद आदि के नाम सुनते है, किन्तु समाज और राजनीति के क्षेत्र में अनेक वादों की चर्चा अधिक चर्चा नहीं हो पाई है । तात्पर्य यह है कि पूर्ववर्ती जन साधारणतः इन वादों में नहीं पड़ना चाहते थे । इसलिए हमें प्राचीन युग में इनकी वैसी भूमिका नहीं दिखाई देती जैसी आजकल है ।

संत तुलसीदास एक ऐसे प्रबुद्ध कलाकार है, जिन्होंने अपनी कलात्मक संवेदनओं की अभिव्यक्ति विविध दिशा में की है । आजकल प्रचलित शासन तन्त्रों में प्रमुख राजतन्त्र, प्रजातन्त्र, जनतन्त्र समाजवाद और साम्यवाद है । इस में राजसत्ता पर से हमारा विश्वास उठ गया है क्योंकि उसके अनुसार मनुष्य-मनुष्य के भीतर भेद और विषमता की भावना विशेष तीव्र होती जा रही है । इस पर अत्याधिक विचारने तथा लिखने की अधिक आवश्यकता है । और यह बहुमूल्य कार्य बहुत बड़ा विद्वान ही कर सकता है । यहाँ पर मेरा उद्देश्य केवल यह संकेत करने का है कि हमारे हिन्दी साहित्य में सुप्रसिद्ध गौस्वामी तुलसीदास की रचनाओं में भी समाजवादी धारणाओं के मूलभूत तत्त्व ही नहीं बल्कि विकसित आदर्श रूप वि◌ा◌ान है । साथ ही साथ मेरा यह भी विश्वास है, कि इन आदर्शो मूल्यों पर आकर समाजवाद भारतीय विशेषता को अपनाता हुआ सुदृढ़ स्थायी साम्य और विश्व प्रेम को विकसित करता है ।

गौस्वामी तुलसीदास मर्यादावादी थे, परन्तु रूढ़िवादी नहीं है । लोक परम्परा और वेद के मंगलकारी नियमों का पालन करने में और प्रतिष्ठित गुरूजनों के अनुशासन को माननें मे वे मर्यादावादी थे । और इस तरह के मर्यादावादी की अवहेलना आज भी हम नहीं कर सकते । किसी भी समाज के लिए , उसके विकास और स्थिति के लिए , आवश्यक नियमों का निर्वाह और गुरूजनों तथा अधिकारीजनों की आज्ञा का पालन आवश्यक है । इसलिए केवल इन बातों को देखकर ही हमें उनकी धारणाओं को परिपूर्ण नहीं समझना चाहिए । हम आधुनिकता के आवेश में आकर जो प्राचीन है, उस सभी के प्रति यदि द्वेष भाव रखने लगे, तो यह रूढ़िवादियों की हठधर्मी से किसी प्रकार कम नहीं । हमें सदा विवेक की दृष्टि रखनी चाहिए । और जहाँ कही भी गुण मिल सके उन्हें ग्रहण करना चाहिए । यह तो गुण–दोष संसार की सभी बातों के भीतर मिल ही जाते है । संसार में न तो कभी पुर्ण दोष हीन गुण की स्थिति रही है । और न अवगुण की । इसलिए तो तुलसीदास जीने कहा है कि –

“जड चेतन गुण दोषमयी, विश्व कीन्ह करतार ।
संत हंस गुण गह हि पय, परिहरिवारि विकार ।।”[१]

इन बातों के आधार पर स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय समाज की रचना, समान आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, अधिकारों के साथ साथ आध्यात्मिक एकता के आधार पर होनी चाहिए । इसके बिना, होगा यही कि जब तक चरित्रवान अधिकारी हमारे इस आधार को लेकर चलते है, तभी यह साम्य कायम रहेगा और हमारे देशगत, जातिगत, वंशगत स्वार्थी और संकीर्ण विचारों के सामने वास्तविक विश्वप्रेम विकसित नहीं हो पायेगा । हम अपने विचारों को दूसरे पर आरोपित करने के लिए न जाने कितनो की हत्या कर देते हैं जिसका दुष्परिणाम यही होता है कि विरोधी दलों के भीतर मानव प्रेम नहीं रहता । अतः वास्तविक साम्य के बावजूद इस स्थायी मानव प्रेम और विश्व प्रेम का महत्त्वपूर्ण स्थान होना चाहिए । गयी कि स्वतः स्फूर्त होकर उसने अपनी शंका के लिए महात्माजी से करबद्ध क्षमायाचना की । हमारे देश में मानवमहिमा की ऊँची कल्पना भगवान राम के रूप और उनकी लीला अर्थात् चरित्र में की गयी है । जो मन को मोह ले उसे ही सौंदर्य कहते हैं और राम का केवल रूप नहीं मोहक था, किन्तु उनका गुण समुदाय भी मोहकथा, उनका लोकव्यवहार भी मोहक था, उनकी प्रकृति परिस्थिति सब मोहक थी । मुख्य बात है उनके प्रेरणादायक चरित्र पर प्रीति और प्रतीति अथवा श्रद्धा और विश्वास रखना ।आधुनिक युग की सबसे बड़ी बात है मानवता की महिमा । मनुष्य कितना भी सार्वभौम चक्रवर्ती हो, किन्तु यदि उसमें शील नहीं है, दया–दाक्षिण्य, परोपकार परायणता, मनुष्य समाज का सामूहिक उत्थान आदि नहीं है तो

उसकी कोई प्रतिष्ठा नहीं मानी जायगी । रामचरित मानस के राम अपने निराकार रूप में ऐसे ही शील-समन्वित महामानव चित्रित हुए हैं । मनुष्यता के मार्ग पर आगे बढ़ने से कतराते हुए अथवा भटकते हुए मानव समाज के लिए अपने रामचरित के द्वारा जैसा सूर्दढ़ आकर्षक प्रकाश-स्तंभ रामचरितमानस ने दिया है, वैसा शायद ही किसी अन्य साहित्य-ग्रंथ ने नहीं दिया हो ।

आधुनिक परिवेश की दूसरी बात है क्रांति ओर विघटन की प्रवृत्ति । धार्मिक, सामाजिक, नैतिक सभी मूल्यों में आज उथलपुथल मची हुई है । लोग अपना कर्तव्य करते नहीं और दूसरों के अधिकारों पर हावी होना चाहते है । शुद्र लौकिक स्वार्थ की पूर्ति ही उनके लिए सबकुछ है । चारित्रिक पतन ही आज की सबसे विषय समस्या है जिसके कारण व्यक्ति बिगड़ रहा है, कुटुम्ब विघटित हो रहे हैं और चार सौ वर्ष पहले ही कांतदर्शी तुलसी ने हमारे इस वर्तमान युग का कोना झाँक लिया था और न केवल यहाँ के रोग का विस्तृत वर्णन ही वे लिख गए हैं, किन्तु उसका उचित उपाय या उपचार भी बता गए हैं । इसलिए आधुनिक परिवेश में भी रामचरितमानस की श्रवणीकता और मानवीयता उत्तरोत्तर बढ़ती ही जा रही है । वर्तमान परिवेश के राजरोग का सुंदर चित्रण दिया गया है । येनकेनप्रकारेण पराये धन का अपहरण ही सयानापन माना जा रहा है माता पिता तक नई पीढ़ीवालों को यही सीख देने लगे हैं कि जिस तिकड्म से पेट भर जाय वही धर्म है । जिधर देखिये उधरही अभिमान और विरोधका बोल-बाला है । नर और नारी सभी केवल शरीर के पोषण में और मानसिक संकीर्णता-जनित पर निन्दा में व्यस्त हैं । सामाजिक विषमता ही इस युग की सबसे बड़ी व्याधि है । इस विषमता को दूर करके सच्चा साम्यवाद कैसे लाया जाय यही इस युग की जटिल समस्या है । तुलसी ने सिर्फ इस विषमता की बात ही नहीं सोची, किन्तु दीनों के बन्धु से समता की स्थापना के लिए प्रार्थना भी की-'मनसंभव दारून दुख दरप / दीनबन्धु समता विस्तारय ।'

आधुनिक परिवेश में कर्म की या श्रम की प्रधानता मानी गई है । मानस में राम का अर्थ-जनन्नियन्त और विधि का अर्थ है हमारा ही पूर्व जन्मकृत कर्म । अर्थात् न तो राम का कर्म से विरोध है, न विधिका । मानसकार ने तो ऐसे मनुष्य को बड़ी फटकार लगाई है जो नपर शरीर पाकर भी कल्याण साधना में रत नहीं है । मानस के सत्यात्र आधुनिक परिवेश में भी स्वस्थ प्रेरणाएँ देने के लिए पूरी तरह जागरूक हैं । मानस के प्रौढ़ विचार आगामी पीढ़ियों के लिए भी सुदृप्रकाशस्तंभ बनने की क्षमता रखते हैं ।

मानस के अनेकानेक नीतिवाक्य हजारों वर्षों के मानवीय चिन्तन के सार स्वरूप होकर सर्वसाधारण के कण्ठों में बसे हैं और बसते रहेंगे । रामराज्य जैसा समाज विश्व में होना चाहिए ।

यथा–"दैहिक, दैविक, भौतिक तापा, राम राज नहि का वहि व्यापा ।
सब नर रहैं परस्पर प्रीती, चलहि सवधर्म निरत श्रृति नीति ।।"(२)

आज के वैज्ञानिक युग के परिप्रेक्ष्य में भी विश्व के प्रायः समस्त देशों ने सर्वशक्तिमान की अलौकिक सत्ता को किसी न किसी रूप में स्वीकार किया है । हमारे देश में इस सत्ता की कल्पना राम और कृष्ण के रूप में साकार हुई है । विशेषतः रामकाव्य जनजन के मानस का काव्य बन गया है । रामकथा से आध्यात्मिक के साथ साथ भौतिक उन्नति के संबंध में भी बहुत सुन्दर शिक्षा प्राप्त होती है । मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है । समाज में रहते हुए समाज के प्रति उसके दढ़ कर्तव्य हैं । इन्हीं कर्तव्यों के पालन की शिक्षा जीवन की वास्तविक शिक्षा है । गुरू–शिष्य, पिता–पुत्र, माता–पुत्र, पति–पत्नी, भाई–भाई, स्वामी–सेवक इत्यादि के आपसी संबंधों तथा कर्तयों की रामकथा में बहुत सुंदर व्यवस्था की गई है । वास्तव में देखा जाय तो स्वतंत्रता भारत में सांस्कृतिक एकता को अक्षुण्ण रखने तथा समस्त भारत एवं भारत की समस्त चिन्ताधारा तथा विचारधारा का प्रतिनिधित्व करने का गुरूत्तर कार्य रामकथा के द्वारा ही पूरा हो रहा है । मध्यकालीन हिन्दी साहित्य की ओर दष्टि डालें तो हमें मालूम होगा कि "तुलसीदास का हिन्दी रामकाव्य भारतीय जीवन मूल्यों की पुनःस्थापना के लिए सबसे उत्तम साधन बना है क्योंकि राम ही भारतीय संस्कृति का चरममूल्य है । राम के करूणा, त्याग, प्रेम, मैत्री, औदार्य, मुदिता, सहिष्णुता, सेवा आदि महान मानवीय मूल्यों की सम्यक् अभिव्यक्ति हुई है । भारतीय संस्कृति में मैत्री भाव और विनयभाव सबके श्रेष्ठ आदर्श हैं । राम तो गुह, शबरी और वानरों से भी मित्रता जोड़ते हैं और ऊँच–नीच भेदभाव के बिना उनसे मिलकर प्रेमव्यवहार करते हैं । वही समाजवाद है ।"(३).

संस्कृति के पंचतत्त्व धर्म, दर्शन, साहित्य, संगीत और नृत्य का समन्वय रामचरितमानस में देखने को मिलता है । वस्तुतः तुलसीदास समत्व भावना के स्पष्ट प्रणेता हैं और उनकी रचनाओं में सामाजिकता और महाकाव्य के रस का मनोहारी समन्वय भी दर्शित है । आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में कहें तो – 'तुलसी– दास का सारा काव्य समन्वय की विराट चेष्टा है, लोक और शब्द का समन्वय, भक्ति एवं ज्ञान का समन्वय, भाषा और संस्कृति का समन्वय, निर्गुण और सगुण का समन्वय, कथा एवं तत्त्वज्ञान का समन्वय, पाण्ड़ित्य, अपाण्ड़ित्य का समन्वय, रामचरितमानस शुरू से

आखिर तक समन्वय का काव्य है । ''तुलसीदास सर्वश्रेष्ठ रामभक्त हैं और उनका रामचरितमानस भक्ति का अनमोल रत्न है, जिसके प्रकाश में आज अंधकार में भटकते हुए भारत के अनेक लोगों को सच्ची दिव्यज्योत प्राप्त हो जाती है ।''(४) न केवल भारत किन्तु समस्त विश्व इस समय चारित्रिक कुंठाओं से ग्रस्त है । उन कुंठाओं को दूर करने की क्षमता मानस में अपूर्व कोटि की है अतः एव इस अभिनन्दनीय गन्थ के वन्दन में झितने भी श्रद्धा विश्वास के सुमन चढ़ाये जाएं उन्हें थोड़ा ही समझना चाहिए ।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि तुलसीदास का समाजवाद एक आदर्श समाज रचना का परिचायक है । तुलसीदास के साहित्य में निरूपित समाजवाद का गहन चिंतन करके उनके मूल्य-आदर्श पर विचार विमर्श करके उससे अवगत होने की अत्याधिक आवश्यकता है । धर्म, जाति, प्रदेश वर्ग-विग्रह आदि के वाद-विवाद में पड़ने की कोई जरूरत नहीं है । बदलती हुई मानसिकता के साथ धीरे-धीरे हमें मनुष्य मात्र को एक समान समझने की सुद्रढ़ नींव डालने का प्रयत्न करना चाहिए । तभी हम तुलसीदास की समाजवादी भावना को सार्थकता प्रदान कर सकेंगे ।

संदर्भ

१.तुलसी की रामकथा - बलदेव प्रसाद मिश्र - पृ. १५
२. तुलसीदास एक अध्ययन - रामप्रसाद मिश्र - पृ. ८०
३.भक्तिकालीन रामकथा-कृष्ण काव्य में नारी-भावनाः एक तुलनात्मक अध्ययन - डॉ. श्यामबाण गोपाल - पृ. ३५
४,मध्यकालीन हिन्दी भक्ति साहित्य की प्रासंगिकता - वी.एन.फिलिण